# गृह-दाह

**प्रेमचंद**

रूपांतरण

**प्रेम जनमेजय**



नवसाक्षर साहित्यमाला

# गृह-दाह

प्रेमचंद

रूपांतरण
प्रेम जनमेजय
चित्र
दीपक कुमार दास

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

यह पुस्तक के.के. बिड़ला फाउंडेशन के अनुदान से प्रकाशित की गई है।

ISBN 81-237-4161-8

पहला संस्करण : 2004 *(शक 1925)*
© रूपांतरण : नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 2003
Griha Dhah *(Hindi)*

रु. 8.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
ए-5 ग्रीन पार्क, नई दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

लाला देवप्रकाश अपने बेटे, सत्यप्रकाश से बहुत प्यार करते। उसका जन्मदिन बहुत धूमधाम से मनाते। पाठशाला पहुंचाने के लिए एक नौकर रखा हुआ था। सत्यप्रकाश बहुत सुशील और होनहार बालक था। सभी उसके सुनहरे भविष्य की कामना करते।

वर्षा के दिन थे। सत्यप्रकाश के माता-पिता गंगा स्नान करने के लिए गए। नदी खूब चढ़ी हुई थी। सत्यप्रकाश की माँ, निर्मला, को स्नान में बहुत आनंद आ रहा था।

लाला देवप्रकाश ने कहा, "अच्छा, अब निकलो, सरदी लग जाएगी।"

निर्मला ने कहा, "मैं छाती तक पानी में चली जाऊं?"

देवप्रकाश बोले, "और जो कहीं पर फिसल जाए?"

निर्मला ने कहा—"पैर क्या फिसलेगा!"

लेकिन सत्यप्रकाश की मां का पैर फिसल ही गया।

एक पल में प्यासी नदी निर्मला को पी गई। सत्यप्रकाश बिना मां का हो गया। माँ बच्चे के जीवन का आधार होती है। माँ के बिना बच्चा पंखहीन पक्षी हो जाता है। मां थी तो सब सत्यप्रकाश को प्यार करते थे। सत्यप्रकाश अब जैसे अकेला हो गया। पिता भी उस पर कम ध्यान देने लगे।

एक दिन सत्यप्रकाश को पता चला कि उसकी नई मां आने वाली है। वह दौड़ता हुआ पिता के पास गया। उसने अपने पिता से पूछा, "क्या मेरी नई मां आ रही है?"

पिता ने कहा, "हां बेटा, वे आकर तुम्हें बहुत प्यार करेंगी।

सत्यप्रकाश ने पूछा, "क्या, मेरी मां ही स्वर्ग से आ जाएगी?"

देवप्रकाश बोले–"हां बेटा, वही माँ आ जाएगी।

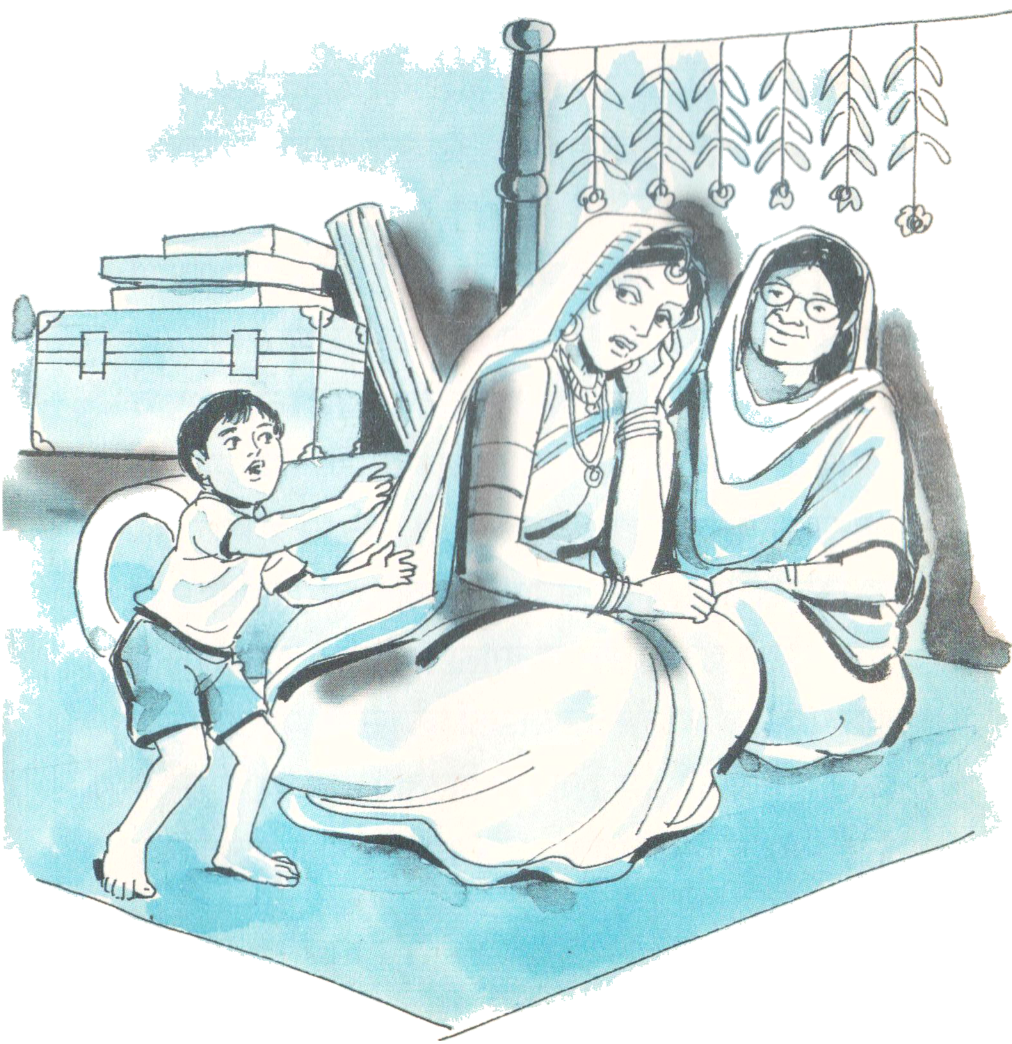
सत्यप्रकाश ने पूछा–"मुझे उसी तरह प्यार करेगी?

पिता बेटे के इस सवाल का कोई जवाब नहीं दे सके। पर सत्यप्रकाश खुश था कि उसकी मां आ रही है।

विवाह के दिन आए। सत्यप्रकाश खुशी से फूला नहीं समा रहा था। बारात में वह भी गया। उसे नए-नए कपड़े

मिले। नानी ने उसे एक अशरफी दी। सत्यप्रकाश को उसकी नई मां से मिलवाया गया। सत्यप्रकाश ने दोनों हाथों से नई माँ का आंचल पकड़कर कहा, "अम्मा!"

युवा नई मां नाराज हो गई। उसने नाराज हो कर कहा, "मुझे अम्मा मत कहो।"



सत्यप्रकाश का दिल टूट गया। नई मां के बारे में उसने क्या-क्या सोचा था। उसके सारे सपने चूर-चूर हो गए।

सत्यप्रकाश की नई मां, देवप्रिया, गर्भवती हुई। सत्यप्रकाश नए मेहमान के आने से बहुत खुश था। सौतेली मां, देवप्रिया, का प्यार अब सत्यप्रकाश के लिए न के बराबर था। देवप्रिया ने पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम ज्ञानप्रकाश रखा गया। सत्यप्रकाश ने सौतेली मां की गोदी से लेना चाहा। मां ने सत्यप्रकाश को डांटते हुए कहा, "खबरदार इसे मत छूना, नहीं तो कान पकड़ कर उखाड़ लूंगी।"

उस दिन सत्यप्रकाश बहुत रोया। एक दिन सत्यप्रकाश ने बच्चे को चूमा। मां ने डांटा और देवप्रकाश से झूठ-मूठ शिकायत कर दी। देवप्रकाश ने लड़के को दो-तीन तमाचे लगा दिए। अब सत्यप्रकाश के जीवन से जैसे मां-बाप का प्यार समाप्त हो गया।

सत्यप्रकाश बदल गया। वह अब चुप रहने लगा। पढ़ाई में भी उसका मन न लगता। वह मैले कुचैले कपड़े पहने रहता। बाजार के लड़कों के साथ घूमता। रोज शिकायतें आतीं और रोज वह पिटता। अब घर में उससे कोई प्यार न करता था। उसका सौतेला भाई, ज्ञानप्रकाश

सबका प्यारा था। उसे रोज मास्टर पढ़ाने आता। मां उसे साफ सुथरे कपड़े पहनाती। देवप्रकाश उसे रोज सैर कराने ले जाते। ज्ञानप्रकाश बहुत हंसमुख था। एक ही पिता की संतानों, सत्यप्रकाश और ज्ञानप्रकाश में बहुत अंतर था। पिता ज्ञान को प्रेम करते और सत्य को दुतकारते।

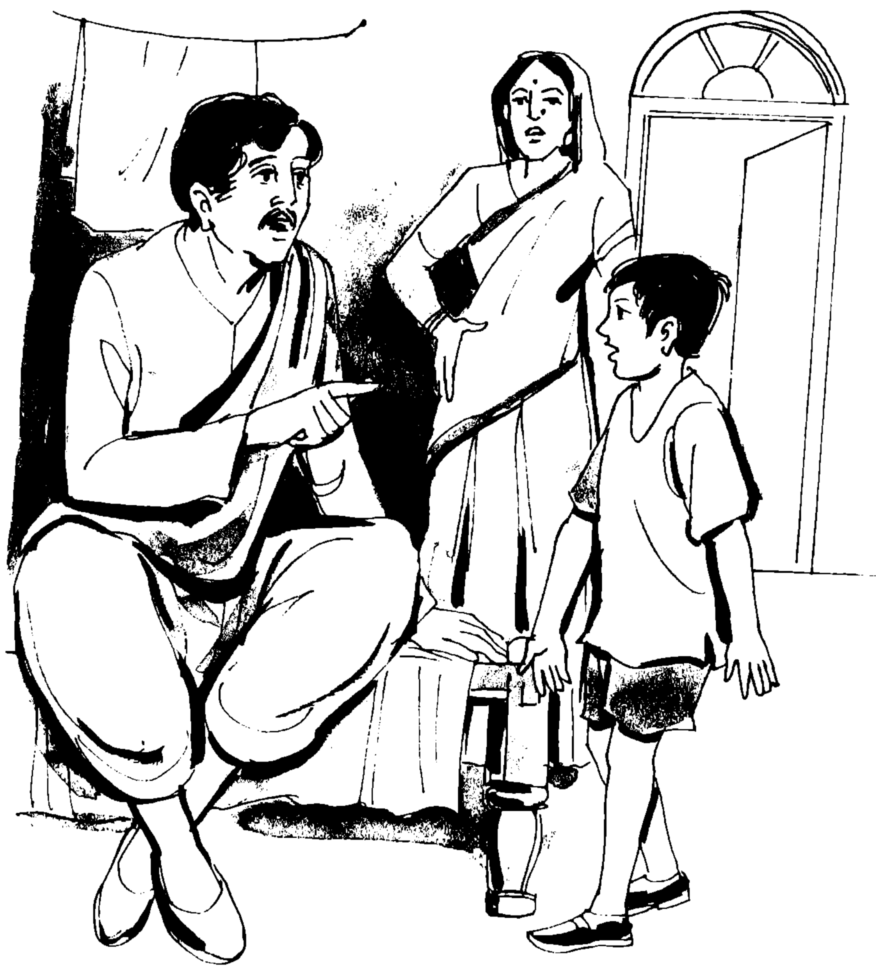
सत्यप्रकाश अपने सौतेले भाई से बहुत प्यार करता था। घृणा से घृणा उत्पन्न होती है। प्रेम से प्रेम। ज्ञानप्रकाश भी अपने बड़े भाई से बहुत प्यार करता था। सत्यप्रकाश के लिए वह अपनी मां से भी लड़ पड़ता। ज्ञानप्रकाश अपने बड़े भाई सत्यप्रकाश का बहुत सम्मान करता था।

सत्यप्रकाश सोलह बरस का हो गया था। एक दिन अपने पिता से किसी बात पर झगड़ा हो गया। पिता ने गुस्से में आकर कह दिया, "मेरे घर से निकल जाओ।"

सत्यप्रकाश को बड़ा दुख पहुंचा। उसने घर से निकलने की तैयारी कर ली। बड़ी तेज दोपहर थी। सभी लोग सोए हुए थे। वह घर छोड़कर जा रहा था। ज्ञानप्रकाश ने उसे जाते हुए देखकर पूछा, "कहां जाते हो भैया?"

सत्यप्रकाश ने कहा—"जाता हूं, कहीं नौकरी कर लूंगा।"

ज्ञानप्रकाश बोला—"मैं जाकर अम्मा से कह दूंगा।"



सत्यप्रकाश ने कहा—"तो मैं छिपकर चला जाऊंगा।"

ज्ञानप्रकाश बोला—"अम्मा तुमसे क्यों इतना चिढ़ती है?"

सत्यप्रकाश ने कहा, "मेरे नसीब खोटे हैं। मैं तुम्हें सदा याद रखूंगा।"

दोनों भाई आपस में गले मिले। सत्यप्रकाश कलकत्ता चल दिया। उसके पास फूटी कौड़ी भी न थी।

सत्यप्रकाश कलकत्ता पहुंच गया। वह मजदूरी करना नीच काम समझता था। उसने एक धर्मशाला में अपना सामान रखा। वह एक डाकघर के सामने लिखने का सामान लेकर बैठ गया। वह मजदूरों की चिट्ठियां, मनीआर्डर आदि लिख देता। शुरू में तो ज्यादा न कमा पाता। बहुत मुश्किल से उसका पेट भरता। धीरे-धीरे उसकी आमदनी बढ़ने लगी।

मजदूर उसके प्यार भरे व्यवहार से बहुत खुश थे। उसने शहर से बाहर एक छोटी सी कोठरी किराए पर ले ली। एक जून खाता। बर्तन अपने हाथों से धोता। जमीन पर सोता। उसे घर के लोगों की याद न आती। बस वह ज्ञानप्रकाश के प्यार को कभी न भूला। अंधकार में यही एक प्रकाश था।

उसने ज्ञानप्रकाश को एक पत्र लिखा। ज्ञान का उत्तर आया। वह उसे बहुत याद करता है। कोई तो है जो उसे याद करता है। सत्यप्रकाश का मन हुआ कि वह ज्ञान को कोई उपहार भेजे। चालीस रुपए तक की कोई एक अच्छी घड़ी। घड़ी पाकर ज्ञान कितना खुश होगा। अम्मा और

बाबूजी भी देखेंगें। उन्हें मालूम हो जाएगा कि मैं भूखा नहीं मर रहा हूं। उसने बचत करनी शुरू कर दी। दो महीनें में उसके पास पचास रुपए जमा हो गए। उसने अपने ज्ञानू के नाम सुनहरी चेन वाली घड़ी पार्सल से भेज दी। उस दिन सत्यप्रकाश बहुत खुश था।

इसी प्रकार पांच वर्ष बीत गए। सत्यप्रकाश अब केवल पत्र लेखक न था। उसने एक छोटी सी दुकान भी खोल ली थी। उधर उसके पिता के दिन ठीक न थे उनकी माली हालत खराब थी।

ज्ञानप्रकाश अब सत्रह बरस का सुंदर युवक हो गया था। माता-पिता उसकी शादी करना चाहते थे। लेकिन ज्ञान इसके लिए तैयार न था। वह चाहता था कि पहले बड़े भाई का विवाह हो। पिता भी चाहते थे कि पहले बड़े का विवाह हो। मां को यह बात पसंद न थी। दोनों में इसी बात पर झगड़ा होता।

एक दिन देवप्रकाश ने अपने पुत्र सत्यप्रकाश को पत्र लिख दिया—“मेरी इच्छा है कि तुम्हारा और तुम्हारे छोटे भाई का विवाह देखूं। मेरे नाते नहीं तो अपने छोटे भाई के प्रेम के नाते बात मान लो।” सत्यप्रकाश को बीती बातें याद आ गई। बचपन के कष्ट याद आ गए। उसने अगले

दिन अपने पिता को पांच सौ रुपए भेजे। एक पत्र भी लिखा। मेरा अहोभाग्य आपने याद किया। आप ज्ञानू का विवाह कर दें। मुझे क्षमा करें। विवाह की बात से मुझे दुःख पहुंचता है। दूसरा पत्र उसने ज्ञानू को लिखा। तुम अपने माता पिता की आज्ञा मान लो।

देवप्रकाश पत्र पढ़कर चुप रह गए। मां ने कहा कि कैसा जहर का बुझा लौंडा है। ज्ञानप्रकाश ने पत्र पढ़ा। उसे समझ आ गया कि माता पिता के व्यवहार के कारण ही बड़े भाई ने ऐसा लिखा है। बड़े भैया को विवाह से ठीक ही नफरत हुई है। उन्होंने सोच समझ कर ठीक ही फैसला लिया है।

शाम का समय था। ज्ञानप्रकाश ने अपने माता पिता से कहा, "मैं कल भैया से मिलने जाऊंगा।"

देवप्रिया बोली, "क्या, कलकत्ते जाओगे!"

ज्ञानप्रकाश ने कहा, "जी हां।"

देवप्रिया ने कहा, "उन्हें क्यों नहीं बुलाते।"

ज्ञानप्रकाश ने कहा–"उन्हें कौन मुंह ले कर बुलाऊं। आपने तो मेरे मुंह पर कालिख लगा दी है।"

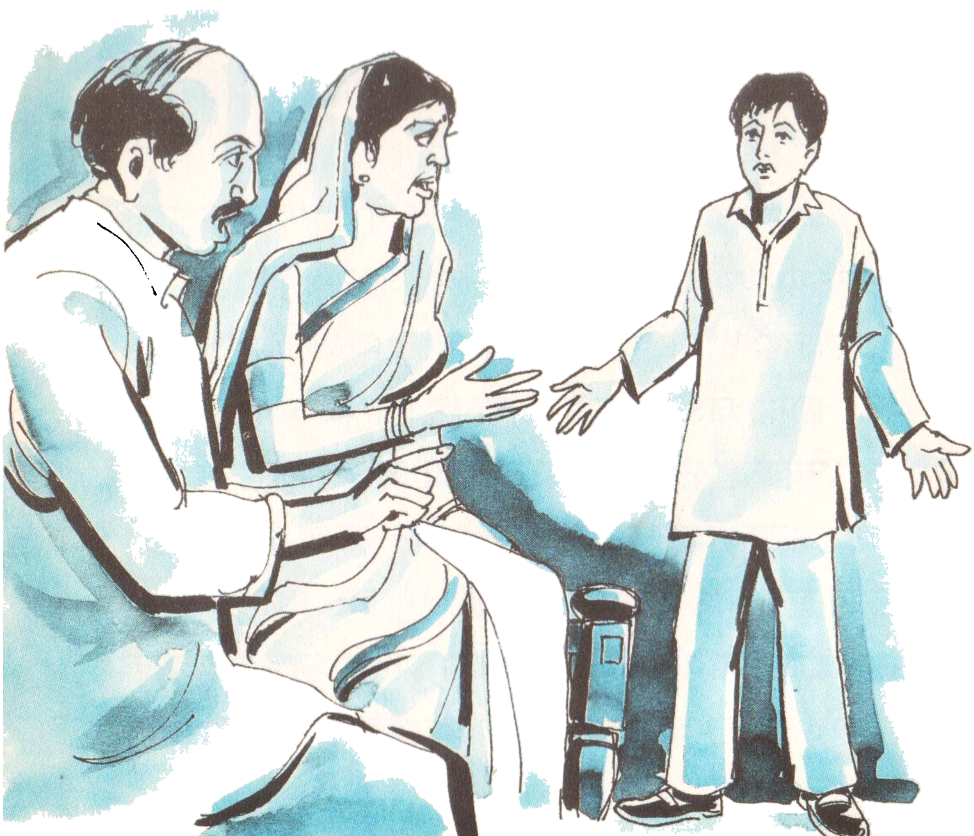
देवप्रिया बोल पड़ी, "अच्छा चुप रह, जले पर नमक न छिड़क। तू चाहे ब्याह कर चाहे क्वांरा रह, हमारे ठेंगे

से। मेरी आंखों से दूर हो जा।''

ज्ञानप्रकाश ने कहा, ''तो मां अब तुमको मुझसे भी नफरत हो गई।''

देवप्रिया बोली, ''जब तू हमारे कहने में ही नहीं तो जहां चाहे रह। यह सब जहर उस चांडाल का ही बोया है। वह मेरे बेटे को मुझसे छीनना चाहता है।''

तीन साल तक बार-बार ज्ञानप्रकाश के विवाह की



बात उठती रही। ज्ञानप्रकाश अपने वायदे पर टिका रहा। तीन साल में काफी कुछ बदल गया। ज्ञानप्रकाश की तीनों बहनों का विवाह हो गया। अब घर में देवप्रिया अकेली औरत रह गई थी। सूना घर उसे बड़ा सताता था। वह सत्यप्रकाश को बहुत कोसती।

देवप्रकाश ने अपने को सब ओर से काट लिया था। ज्ञानप्रकाश एक विद्यालय में अध्यापक हो गए थे। देवप्रिया अब संसार में जैसे अकेली रह गई थी। वह चिट्ठियों में सत्यप्रकाश को बहुत कोसा करती।

ज्ञानप्रकाश अध्यापक बनकर आत्मनिर्भर हो गया था। अब उसे भाई के पैसों की जरूरत नहीं थी। वह अब पत्र भी कम लिखता। शहरों में मनुष्य तो बहुत रहते हैं लेकिन अपनापन बहुत कम लोगों में होता है। सत्यप्रकाश जैसे भीड़ में भी अकेला था। इधर देवप्रिया की जहरभरी चिट्ठियां सत्यप्रकाश को बहुत पीड़ा दे रही थीं। देवप्रिया ने तो यहां तक लिख दिया कि सत्यप्रकाश ने ही सबका जीवन बर्बाद कर दिया है। सत्यप्रकाश के दिल पर चोट लगी थी। उसे अपने जीवन से नफरत हो गई। उसने दुकान बंद कर दी। बाहर आना-जाना छोड़ दिया। सारे दिन खाट पर ही पड़ा रहता। पुरानी यादे उसे बहुत कष्ट देतीं।

खाट पकड़े हुए सत्यप्रकाश को कई दिन हो गए। एक शाम उसे दरवाजे पर किसी के पुकारने की आवाज सुनाई दी। उसने कान लगाकर सुना और चौंक गया। आवाज बहुत जानी-पहचानी थी। वह दौड़ा, दरवाजे पर गया। देखा, सामने ज्ञानप्रकाश खड़ा था। कितना सुंदर लग रहा था। वह उसके गले से लिपट गया। ज्ञानप्रकाश ने अपने बड़े भाई के पैरों को छुआ। दोनों भाई घर के अंदर आए।



भीतर अंधेरा छाया हुआ था। सत्यप्रकाश ने लालटेन जलायी। घर क्या था, भूत का डेरा था। सत्यप्रकाश ने जल्दी से एक कुरता गले में डाल लिया। ज्ञानप्रकाश अपने भाई की यह दशा देखकर रो पड़ा।

सत्यप्रकाश ने कहा, "मैं आजकल बीमार हूं।"

ज्ञानप्रकाश बोला–"वह तो देख ही रहा हूं। आपने यह क्या हाल बना लिया है अपना!"

सत्यप्रकाश ने कहा–"तुमने अपने आने की सूचना नहीं दी।"

ज्ञानप्रकाश बोला–"लगता है आपको मेरा पत्र नही मिला।"

सत्यप्रकाश ने कहा, "हो सकता है डाकिया दुकान में पत्र डाल गया हो। मैं इधर कई दिनों से दुकान नहीं गया। घर पर सब कुशल तो हैं?"

ज्ञानप्रकाश ने कहा–"माता जी का देहांत हो गया।"

सत्यप्रकाश ने पूछा–"अरे! क्या बीमार थीं?"

ज्ञानप्रकाश ने कहा–"जी नहीं। पिछले कुछ दिनों से पागल–सी हरकते कर रही थीं। पिताजी ने कुछ कड़वी बात कह दी, शायद इसी पर कुछ खा लिया।"

सत्यप्रकाश बोला–"पिताजी तो कुशल से हैं?"

ज्ञानप्रकाश ने कहा—"हां, अभी मरे नहीं हैं।"

सत्यप्रकाश ने पूछा—"अरे! क्या बहुत बीमार हैं?"

ज्ञानप्रकाश बोला—"माता जी ने जब जहर खाया तो पिताजी उन्हें दवाई पिलाने लगे। माताजी ने जोर से उनकी दो अंगुलियां काट लीं। जहर पिताजी के शरीर में भी पहुंच गया। तब से सारा शरीर सूज गया है। अस्पताल में पड़े हुए हैं। बचने की आशा नहीं है।"

सत्यप्रकाश बोला—"तब तो सारा घर ही चौपट हो गया।"

ज्ञानप्रकाश ने कहा—"ऐसे घर को तो बहुत पहले चौपट हो जाना चाहिए था।"

तीसरे दिन दोनों भाई सुबह कलकत्ते से विदा होकर चले गए।

●●●



मुद्रक : जुगनू ऑफसेट, दिल्ली-32

एकः सूते सकलम्

रु. 8.00 ISBN 81-237-4161-8

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

